

श्रीः

वन्दना

मंसमना च्छादितो यद्वत्

स्फुलिंगो न प्रकाशते ।

स एवेष्टत - प्रभादेन

स्पृष्टो दाहं तन्नोति च ॥ १ ॥

तथैवापाततो यस्य

सर्वाङ्गम विकसिनीम् ।

शक्तिं च तेजसो गुप्ताम्

कश्चिदेवेष्टे नैव्यष्टे ॥ २ ॥

दीप्यन्निष्पिणी ज्ञाणी

संसरसा काण्डचतुरी ।

सन्नितो भद्रपाण्डित्यम्

प्राप्तमगुप्ति 'निशेक्तः ॥ ३ ॥

यो ऽ सौ दिव्यगुणो

विद्वच्छूरण्यो सभक्तः सततम् ।

प्राप्सीत ^{शायच्छ्रुतः} कश्चित् सत्त्वमयो
 विद्वद्वै निष्ठाधरो ऽ धनः ॥ ४ ॥

तं वन्दे ज्ञानिनामग्र्यम्,

ज्ञानाचर्यं महोजसम् ।

तपस्विनं सदाचारं, विचारं च

पुण्यश्लोकं सुधीनरम् ॥ ५ ॥

अमृतवाग्भवचायम-

परमानन्दरूपिणम् ।

स्थितप्रज्ञं महात्मानम्

शक्तिभक्ति समन्वितम् ॥ ६ ॥

प्रथम दर्शन

यह दिसम्बर १९२८ की बात है, मैं उन दिनों पंजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत चलनेवाली 'प्राज्ञ' परीक्षा के प्रथम दिवसीय परीक्षा में श्रीनगर में संस्कृत पढ़ता था, सदी की कुट्टियों के अगलबगल के दिन थे, मैं अपने घर 'मातेठ' आया था, मेरे दिवङ्गत पूज्य मामाजी - श्री जे. नन्दलाल जी खार - जो अनन्तनाग के सी. एम. एस. हाईस्कूल में प्राध्यापक थे - ने मुझे कहा कि मेरे पास आजकल एक ब्रह्मचारी जी रह रहे हैं, वह संस्कृत के बड़े विद्वान हैं तुम उनके दर्शन करने आ जाओ, मामा जी का घर 'मातेठ' के पवित्र कुण्ड के पास ही था, वहाँ उन दिनों बिल्कुल कुण्डों (कमल, विमल, दो कुण्ड) के समीप

ही एक धर्मशाला थी। ^{जो कि हमारी धर्मशाला थी} ^{धर्मशाला का नाम} ^{कि जो कि था} उसी के

एक कमरे में पूजा-पूजा की रात को
रहते थे और प्रातः सायं मामाजी के
घरों भोजन करने आते थे। संभवतः
जौनपुर का पक्ष था। दिन के ९ बजे के
लगभग का समय था। श्रीजी आगये।
उस समय इनकी ठासु मेरे निगर में
तीस बीस पच्चीस के बीच के
बर्तों की रही होगी, छोटा कद, बूरा
प्राणीर, तेजस्वी चेहरे, गौरबी, ठोड़ी पर
थोड़ी दाढ़ी और हल्की सी झुर्रियाँ, काले
और सुँघरोले काला, कोली और कुत्ता
अगर जमी बाइकेट दारीदार। मैंने
प्रणाम किया, मुझे से पूछा क्या
जखे हो? मैंने कहा मैं जिहा
में जखे हूँ। उन्होंने ने कहा मैं
से मुन्ना का जखे हूँ। मैंने

जब १. यह धर्मशाला जखे थी। इस के
मौनी बाबा की धर्मशाला जखे थे। यह
विमलकुण्ड के दाहिने तरफ थी।

नाम बता दिये। मेरे हाथ में महाकवि
 कालदास का 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक
 था। उस का प्रारम्भिक पद्य
 'वेदान्तेषु यमाद्वरेक ^{पुष्प-} विजयः चत्वारिंशत्
 शैवसी' पद्यने को कहा। मैंने पद्या
 और सुबनी भी सुनाया। उन्होंने पूछा
 'वेदान्तेषु' का क्या अर्थ है। मैंने उस
 समय जो समाकाथा बता दिया। फिर
 और भी बातें हुई। इस के बाद
 हमारा वहाँ रोज इन के पास आने
 का क्रम रहा। मुझे इन के संस्कृत
 पद्यों को पढ़ने की शैली बहुत
 मधुर लगी। यद्यपि मैं उस समय कुछ
 विशेषरूप से ~~स~~ जानता नहीं था
 परन्तु इन के अन्दर संस्कृत का इन्तज
 की शान्तशक्ति का प्रमाण मुझ पर
 पड़ा था।

उन दिनों 'श्री' जी दोनों समय भोजन करते थे। 'प्रदोष' ब्रह्म रखते थे। उस दिन स्वयं भोजन करने लगे थे। पकाते थे और मौन ^१ ब्रत रखते थे। प्रदोष के दिन मैं उनके पास ही रहता था क्योंकि यदि उन को कुछ करना होता था या किसी वस्तु की आवश्यकता होती थी तो मुझे जाते सँकेतो से बताते थे या लिख कर देते थे।

मैं शिवरात्रि कर के श्रीनगर चला गया। श्रीजी को मैंने प्रार्थना की थी कि वह जब श्रीनगर पहुँचेंगे तो मेरे पास आकर रुकेंगे या मुझे सूचित करें।

'भातिण्ड' में पण्डित शिवजी केतेदार नरमक एक सम्पूर्ण सज्जन व्यक्ति रहते थे ^{तत्कालीन जम्हूक थ} वह सरस्वती वनविभाग तत्कालीन जम्हूक परीर गजनेमेर के फारिस्ट विभाग में एक निशिष्ठ पदाधिकारी थे।

२ यह वृत्त ^त श्रीजी कई जगहों तक करते रहे और लग्न होने के बाद वर्ष ४० ~~वृत्त~~ से नहीं रहा।

इन के साथ 'महात्मा' जी (भीजी) का
साक्षात्कार वहा हुआ था। उनका एक
पुत्र 'भीजिमाल' थे जो वह अभी
मातृश्रम में रहते हैं और बड़े हैं। परन्तु
अब रिहाई हैं। वह भी 'महात्मा' जी
के आत्मिक सहाय और सेवक थे।
पंडित शिवजी महात्माजी को परम श्रद्धा
मानते थे। महात्माजी उन को पूज्यत्व का
अमल पत्रिका सम्मानित मानते थे।

उन दिनों महात्माजी अलखाना
तहसील में अवस्थित गौतमनाथ, मन्नालनाथ
(तीर्थ नाथनाथ) गुसाईगुहा इनका उगादेवी
(प्रारि अंगन) इत्यादि इन आश्रमों में जाते थे
और कुछ दिनों रहे भी थे, उन दिनों इन स्थानों में
आधना करने वाले कालिदास अश्विनी महात्मा रहते
थे। यह शास्त्र इन दिनों की बात थी जब
कि महात्माजी को एक विभिन्न व्यक्ति से
एक रात साथ रहे का अक्सर आया था

बाल इस प्रकार थी -

महात्मा जी कि- विजय श्रम (बीजा बिहरा)
से किलस्ता (ओलास) की ऊँची मुँगाह के साथ
किनारे से चलते नदी को पार करने के लिये
पुल को ढूँढ़ रहे थे और उस पार जाना चाहते
थे, शान्त का समय था, महीना कार्तिक का
था, परन्तु पुल का पता नहीं लगता था, इतने में
एक शूद्र मुसलमान जिस को पैरो में 'पुलहोर'
(घास का २ थपलुका झूला) था, वह महात्मा जी
की पार जाने के प्रयास को देख कर बोला,
'बाबाजी' पार जाना चाहते हो, चलो मैं भी
पार ही जाना चाहता हूँ, वह शूद्र नहीं की पार
की ऊपर से चलता था गया और उस इंसान दिखाई
पर खड़े होकर महात्मा जी को आवाज देना
देने लगा। महात्मा जी ने कहा मैं तो नहीं
आसक्तता हूँ। इतने में वह आदमी पानी के
ऊपर से ही चलता हुआ महात्मा जी के
पास जाकर आया और बोला नहीं
आसक्तता तो चलो मैं भी उठ दूँ साहस है
रात को किसी जगह रहूँगा।

फिर दोनों कुछ दूर चला कर एक घर में
रात को रहे । वृद्ध ने महात्मा जी से कहा
बाबाजी, यह भी एक इन्जम (विद्या) है
इस से खुदा नहीं मिलता । महात्मा जी
ने यह बात सुने एक प्रसंग में इस
को कई वर्षों के बाद पुनः भी उठाकर कहा
था कश्मीर में कुसुमाग्रत भी कई गुप्त
सन्त हैं ।

ठाक जी बार लो
महात्मा जी कश्मीर में पूरे १३ महीने रहे थे ।
और माघ की कठिन सर्दी के दिनों में भी
कभी कभी मरन और अनन्तमाग के घरों में
बैठते थे और लैरते रहते थे । एक बार
अनन्तमाग में कुछ कश्मीरी साधुओं ने उन पर
आधेय पूजित नाराजगी प्रकट की थी कि
"आप लो ब्रह्मचारी" है, ब्रह्मचारी को लैरना
धर्मशास्त्र आज्ञा नहीं देता । परन्तु उन्होंने इस
की परवाह नहीं की । बाद में उन्हें जला ताला
गया था कि जिस व्यक्ति से एक शास्त्रीय
विवाद करते थे वह वास्तव में संस्कृत के
उद्भूत विद्वान हैं ।

उस समय महात्मा जी जाम्ना में पैदा हो
 की हथानों पर ठहरते ठहरते जशमीर बादी
 में पहुँचे थे। जम्मा से चले कर अशमपुर
 आकर कुछ दिन ठहरे थे। वहाँ से 'चिनाली' में
 जो कि एक एक प्रतिष्ठित जगह है ~~वहाँ~~ कुछ
 दिन ठहरे थे। वहाँ की एक धरना सुनोले थे
 कि वह एक 'दावा' में गये। दावा
 वाले ने उन्हें आदर से भोजन खिलाया,
 महात्मा जी ने भरण भोजन खाया और
 दो तीन सज्जियों, पुजार, पायडु भी थे।
 महात्मा जी ने दावा वाले को कहा कि किन्ति
 जैसे दूँ। उस ने कहा किमा 'उम ने रखा,
 जैसे क्या बने जो मेरे लो लूँ, कुला लो पूरे
 दो जैसे' भी नहीं बने।
 महात्मा जी ने यह बात उस समय के
 सहायक के प्रसंग पर एक दो बार कही थी।
 कहने के बाद वह कहते थे 'श्रीनारायण जी,
 इन बातों का लिखना'। मैंने उस समय
 इस पर अधिक ध्यान न देला था, परन्तु
 आज यह लिखते समय उन का यह कथन
 याद आ रहा है।

जयपुर में पुनरागमन

सन १८३० में महात्मा जी से फिर मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस समय मैं 'जिशाद' में पहुँचा था शायद प्रथम बार मैं। मैं श्रीनगर में एक स्मृतिस्थान जोरीशंकर मन्दिर की जननिर्मित धर्मस्थान के एक एक कमरे में ठहरा रहता था। मार्च में महात्मा जी मेरे माताजी हमारी नई श्रीनगर-ताल के पास पहुँच गये थे। वहाँ से श्रीनगर आये थे। श्रीनगर में मुझे उसी धर्मस्थान में मिले थे ठहराये गये 'श्रीनगर' के घर। एक दिन प्रातः ही मेरे पास सात लोकर आये कुछ क्रोध के थे क्योंकि जिसे हमारे घर में उन को कुछ सम्मान हुआ था इस लिये उन को घर छोड़ दिया था फिर अभी वहाँ नहीं गये। उन दिनों श्रीनगर में शेरवलादेव का सनत-प्रातः संचाल चला था। एक साधारण सी बात पर हिन्दू-मुस्लिम मगडा रहता था मैं आना

भीनमर के गुहरी अस्तर में थी। शासक का
 समय का महलानी जैसे शासक को सिर का
 जोते थे मै भी उन के साथ चला। हम लोग
 अमीराकदल की तरफ चले। आई सुमा
 बाजार पर पहुंचे रही थे जिन्हें मुसलमानों ने
 दूध पकड़ा, गिलने भी राहों में हिन्दू
 जा रहे थे। भागने लगे, कई मुसलमान
 कुंजों ने दुरियों भी निकाली थी, हम दोनों
 अमीराकदल की तरफ भागे तो गये। कुंज
 महलानी का पता न चला न उन को मेरा,
 गिरते ठोड़े खोले में। अपने को बचाता
 हुआ गुमती अमीराकदल के प्रारम्भिक बाजार में
 पहुंचा, वहाँ महलानी कुंज मिले, उन को भी
 ठोड़े पड़े थे। फिर हजुरीबाग की पुलिस
 चौकी पर हमें कुछ लोग लगे, जहाँ कि
 वहाँ पुलिस कुछ पूछताछ करती थी।
 हमें वहाँ से छुटी मिली, फिर जहाँ जाते
 जहाँ कि अमीराकदल से ही मरकाट
 होने लगी थी। महलानी कुंज और
 दो तीन दिनों को

रज्जु जम्बूवासी डोंगरा के पनिलारुपर
लेजके बड़े उन के परिचित थे। हम सब
वहरी रात को रहे भोजन आदि की उनके
थहो ही हुआ। प्रातः दस बजे वहाँ से
चल कर आये कुहिले में पहुँचे।

इन दिनों में कई मनुष्य महात्माजी के
सम्पर्क में आये। जिन में वहाँ पर कुछ
व्यक्तियों का उत्प्रेरक करना आनन्द
समझता हूँ। - यह है -

श्री पण्डित श्रीकालानन्दराजजी

यह श्रीनगर में जम्बूवासी राज्य
के धार्मिक विभाग के एक विशेष ज्ञाता-
सी थे। श्रीनगर के रहने वाले संमत्त एवं
धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। इन के वहाँ
महात्माजी श्रीनगर में इन के निवास स्थान
पर रहते थे। महात्माजी का उपलब्ध भू-
पूर्वक आधार करते थे। इन का सारा परिवार
महात्माजी का भक्त था। महात्माजी की
आसी व्यवस्था करते थे। यह दिल्ली में भी

गलबर्गे में भी महात्माजी से मिलने के
 लिये आते थे यद्यपि यह सब बहुत बुरा
 था परन्तु निरन्तर अन्धे राजाजी की ओर
 ऐसे और भ्रष्टा की भावना से यहां भी
 आते रहे। इन्होंने भी महात्माजी के आदेश
 पर उन के प्रथम और स्थान में रहने
 के लिये भीनमर के राजधानी में आवासीय
 धर्मिक विभाग के आवासीय स्थान सरकारी भवन
 में ठहरने का प्रयत्न किया था। यह उन
 दिनों भीनमर से का एक सशस्त्र एक
 शान्त क्षेत्र था। यद्यपि उन दिनों एक ही
 कश्मीरी पंडित का गृहस्थ था। भोजन की
 व्यवस्था पंडित श्रीकालाल जी ने इन के
 लिये उसी घर में की थी। जंगल राजा
 के लिये प्रातः सायं यहां जाते थे और
 सरकारी भवन में स्थानलगास करते थे।
 मुझे बताया कि मैं ^{आस} जल्द ही रात को रहे।
 मैं सुडीअहलमर के अपने निवास से
 वही रात को सोने के लिये आता था।
 आवाय का भास था। हमारी परशादा
 में -

प्रालम्बालीन कक्षाओं - २ लगती थीं। मैं
 स्कूल से आकर भोजन कर के भद्राहमे ही
 महात्मा जी के पास पहुँचता था। रात को भी
 कभी कभी उन के पास ही रहता था। उन्हीं
 दिनों मैंने आचार्य आभिनवगुप्त के कुछ
 श्लोक दिए थे जो मैंने अपने ही प्राचीन ग्रन्थ
 से (पाण्डुलिपि) नकल किये थे। महात्मा जी
 उन को जैसे आनन्दपूर्वक पढ़ते थे और
 कहते थे यह तो ऐसा लगता है जैसे दि
 में ही विचार हों। तब तब उन्होंने जरूरी
 शैव दर्शन के जो कोई ग्रन्थ नहीं देखा
 था। इस के बाद इन जी जिज्ञासा बढ़ गई
 और उन्होंने मैं पण्डित ही कालाना जी के द्वारा
 अश्वमेदी शैव दर्शन के जहाँ से ग्रन्थों
 को मंगवाया और पढ़ते रहे। इन में ईश्वर
 प्रत्यभिज्ञा, परमाथि संगर, ईश्वर उदय, १
 यह निश्चय इन को पढ़ते रहते थे और
 ऐसा लगता था जैसे उन को रणजिसेक
 दिशा का भान होगा था। उन दिनों मुझे भी
 उन के गहनार्थि गहनार्थि ज्ञान

और प्रभावशाली तथा साधनामयी को
 विशेष रूप से सम्मानित का सुअवसर मिलता था।
 मैं उन दिनों अश्वमेधी विद्वानों के साहित्य
 और राजतरंगिणी को पढ़ता रहता था और
 महात्माजी को अश्वमेधी के कार्यक्रम विद्वानों का
 और ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण करता था।
 इस विषय में वह पहले से ही पूर्ण ज्ञान
 रखते थे। उन दिनों उन के साथ निरन्तर
 एक मास तक मैं रातदिन रहता था और
 उन्होंने बहुत से रहस्यमय उपदेश दिये थे
 जिन का प्रभाव प्रभाव मुझे उन के समीप
 और भी अधिक विजृम्भित गया। जब
 मैं उन से अलग हुआ मुझे बहुत दिनों
 तक सूना सा लगता था। महात्माजी
 इस के बाद शायद 'शारदा देवी' का
 दर्शन करने के लिये अश्वमेधी घाटी के
 वासुदेवजी के लक्ष्य चले गये थे।

श्री सतीनन्द जी

यह भी श्री टीका लाल जी के घर
पर महात्माजी के साथ रहते थे। वे तो
पुलिस के व्यक्ति, नौकरी छोड़ दी थी।
और 'साधू' बन गये थे। बहुत मर्दा थे।
महात्माजी को चढ़ाये इन का स्वागत
आच्छा न लगाता था तथा यह स्वयं साधु
मान कर इन से सद्बचन कर ही करते
थे। एक दिन इन की स्पर्श करने का आग्रह
सीमा से जो लोच गई। महात्माजी को जो
मुख्य उद्योग प्रेम मज्जा उठाने लगे।
महात्माजी श्री टीका लाल जी के घर छोड़ कर
आ गये। श्री सतीनन्द जी से फिर कभी न मिले।
उन का अन्त भी बहुत बुढ़ी लम्ह होगा।

श्री बलजीनाथ जी जण्डाल

उन दिनों बलजीनाथ जी जिलाधीन ही
थे। मैं इन को लेकर जे. टीका लाल जी
के घर महात्माजी का दर्शन करने
करने के लिए गया। उन दिनों
भी यह आगे सौरभ के में रहते थे

आगे सैकल घड़न प्रारम्भ किया था।
यह उन के साथ जो केसर बलनीनाथ
का प्रथम समाजगत था। मैं तो महात्माजी
के पास आता ही रहता था। जब भी मैं
जाता था। महात्माजी इनका कुशल समझते
आत्मना जिज्ञासा आगे उत्सुकता से
पूछते रहते थे। जिस को जता था कि यह
महात्माजी के इनके मित्रताय सन्ध्या
में आकर इन के विशिष्ट सिद्धान्त बनें।

भीमाद्वयनाथ जगद

यह भी महात्माजी के विशिष्ट
सहपात्र रहे हैं। मेरे साथ पढ़ते थे और
'भीमना' के रहनेवाले थे। इसने
भी जो का कुक्षि गुप्त महात्माओं का
परिचय दिया था जिस पर भी जी विशेष
रूप से रोजा करने लगे थे। महात्माजी ने
कहा कि 'भीमाद्वय' किसी सिद्धांता से
ही आया है। वह प्रत्यक्ष आत्मज्ञान में ही
१९३५ में कैलाशनाथी हुए। महात्माजी
को इस पर बहुत कुछ और पश्चात्ताप
हुआ था जब मैंने इन को बताया कि भीमाद्वय
नाथ का स्वामी बन हुआ।

पुनर्मिलन

सन १९३२ में महात्मा जी का दर्शन
और सहवास फिर प्राप्त हुआ। मैं भीनमर में
'शास्त्री' प्रथमवर्ष में पढ़ता था। महात्मा जी
श्री 'मातंग' आये थे। मैंने सुना इतने में श्री
जी भीनमर आये। श्री टीकालाल रज्जो जी
के घर ही ठहरे थे। मैं जाता जाता ही था।
महात्मा जी से मैं प्रायः कश्मीर के अतीत
विद्वानों और ऐतिहासिक दृष्टान्तों के विषय
में चर्चा करता ही रहता था। कुछ तो उन्हें ने
करने भी थे। कुछ नहीं। इनमें एक दिवस
तीर्थ 'हंसवली' नामक तीर्थ था। इसके
विषय में 'राजराजिणी' के पुराणिक
कश्मीरवर्णन में लिखा है :-

ॐ देवी भद्रिः शृङ्ग

गुणैश्चैव शृङ्गैः स्वयम् ।
सरोऽन्तर्दृश्यते यत्र,

हंसवली सरस्वती ॥ १॥

इस अत्यन्त लघुवाच्य सिद्ध क्षेत्र का
स्टीन ने खोजा है और इस का विस्तार
वर्णन लिखा है। यह स्थान कश्मीर के
दक्षिण पश्चिमीय पर्वतों में अवस्थित है
और ७ कुछ दूरी ही है। मैंने जब
महात्मा जी से कहा तो उन जी भी उच्चर

जिज्ञासा बढ़ गई। श्री टीकालालजी ने
 कहा हम इस का प्रबन्ध कर देंगे।
 यह स्थान कश्मीर के पुलवामा तहसील
 में 'हवाल' ग्राम के समीप है।
 महात्माजी के वहाँ कुछ सेवक भी थे जो
 टीकालालजी के परिचय के आदमी थे।
 उन में एक पण्डित दामोदर बवान नामक
 एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। महात्मा इस ग्राम में
 पहले भी रह चुके थे यहाँ पर रह कर
 महात्मा एक पुस्तक 'आत्मविलास' की
 रचना की थी।
 महात्मा का महीना था। महात्माजी
 के साथ मैं 'पुलवामा' पहुँचा। वहाँ से
 हम दोनों टांगे पर सवार होकर 'हवाल'
 के लिये रवाना हुए। ग्राम की दुपहरिया
 में चारों ओर रमणीय रेतों के बीच मैं
 होकर टांगा चला रहा था। साहित्यिक चर्चा
 हो रही थी। महात्माजी ने अनेक श्रीकृत से
 अपनी बाल्यकाल की रचना सुनाई। रचना
 इस प्रकार है: -

१. भारतीय विरोधि हरि शेष पुरन्दरायणम्
 कुण्डलमेति महती निपुणापि ताणी।

१ महात्माने 'आत्मविलास' में 'हवाल' लिखा है
 २ इस का वर्णन 'आत्मविलास' के अन्त में है।

वाणी २ तब स्तवविधौ भग्न बालिशस्य,
 हे नाथ शृङ्गार कथं सफल भवित्री ॥
 उनके बोलने का प्रकार और उन की
 उस समय की भाँति विह्वलता अचानक
 थी। मैंने कहा महात्मा जी; यह तो
 बहुत मधुर और सुगम पद्य है। वह बोले -
 'यही तो प्रसादश्रवण है'।

हम 'हाल' चार बजे पहुँचे। एक
 उनकी सेविका थी लिफ्टवाला। उसने
 घर में रहे। पता अलग-अलग पण्डित
 'धर्मरत्नरत्न' केही बाहर गये हुए हैं।
 उनके लौटने पर ही पता का प्रयत्न
 हो सकता है। मैं भी फिर महात्मा जी के
 साथ ही रहा। यही पर वह मुझे 'आत्म-
 विलास' के पद्यों को सुनाते थे और
 उनका गीत दाशनिज गम्भीरता से
 भरा होता था। मैंने 'आत्मविलास' की
 नकल कर के उनको सुनाकर आदरों से
 इस की नकल दे दी और मूलद्रष्टा^२
 उन की ग्राज्ञा अनुसार अपने पास रखी।

१. शीघ्र समयमें जाने वाले वगैरे मधुर शब्दों की
 रचना को 'प्रसाद' कहा करते हैं।

२. यह मेरे पास अब भी सुरक्षित है।

वहाँ हमें स्वयं श्रीमद्गुरुजी के पास 'शारदा-
 माहात्म्य' देखने को मिला। स्वामीजी ने
 कहा कि इस की नकल करो। मैं नकल
 करने लगा क्योंकि ^{वह} श्रीगुरुजी 'शारदा लिपि'
 में था अतः महात्माजी जयने ही समझते थे।
 अतः पास इस की प्रति रखने को ~~मैंने~~
 लालसा से भी मैं नकल करने लगा। महात्मा
 भी पढ़ते थे। स्वयं दृष्टान्त पर नहीं बलिन
 आया कि शारदा भगवानी अक्षरों को
 पक्षी (लिता या मैना) के रूप में
 दर्शन देती है। वह सबको ही महात्म्य
 की उच्छला कर गर्जना-होगा। मैंने
 कहा महात्माजी! कजा कात है? कह बोले
 गतवन्ति मैं शारदा क्षेत्र गया था।
 मेरे मन में तब से यह भावना हो
 गई थी कि यहां मुझे कुछ विशेष
 चमत्कार देखने को नहीं मिला। मेरे मन
 में कुछ ^{आशांका} दुःखिता सी होगई थी
 परन्तु अजि तुम्हें इस का समधान
 होगा। मैंने कहा उब कीन कात हुई

वह बोले -

'जब मैं शारदा क्षेत्र गया था वहाँ
भगवती जी मूर्ति का दर्शन करके बाहर
किसी शिला पर बैठा था। इसने मेरे सामने
रुक देखा। मैं उधर देखने लगा, देखता
क्या हूँ कि देऊँ, तोते का रुक जेडा
बैठा है। मैं ~~खोखले~~ ^{गौरव} उन की तरफ़ देखता
गया। कुछ देर बाद वह ~~उठ~~ उठ गया।
इस के बाद मेरे मन में आया कि वहाँ
कश्मीर में तोते तो होते ही नहीं यह
कहाँ से आये। फिर वहाँ के किसी व्यक्ति
से पूछा कि यहाँ तोते ~~हैं~~ भी होते हैं
उस ने कहा यहाँ तोते नहीं हैं। हम
ने कभी नहीं देखे। मैं फिर चुप हो गया
और वहाँ से चला आया।' यह
आज मेरी शैली दूर होगी। शीना
जब यह 'माहत्म्य' देखेगा। इस
बात को अवश्य लिखना।

यों ही दस दिन बीत गये। श्रीदामोदर
जी ने धारा का सारा पुष्प लिखा। हम

११ आदमी के एक सूती भी थी। प्रातः

रका पीकर हम पश्चिम की दिशा में चले।

एक नदी पार कर के आगे हमारा

रास्ता एक खाड़ी में से हो गया। यह

खाड़ी दोनों तरफ लीट और देवदार के

पेड़ों से आवृत पर्वतमाला से बनी थी।

झींझो बीच कलकल करती हुई नदी

बहती थी। किसी ने कहा यह नदी

'मुजुभादी' से आ रही है। यह इस

तीर्थ का उत्तमान नाम है। भागि निर्गत

था। रास्ते में हमारे ६ लोचों तरफ

सारे भागि में पुरानी स्तूप इधरे उधरे

कुछ दूरे हुए मिट्टी के बतियों के ढुंढे

खिलने पड़े थे। इस से वह प्रतीत होता

था कि पहले बहुत से लोग आते जाते थे।

यह खाड़ी १११ मील लंबा कर हमें सामने

एक छीलनुमा पहाड़ी ^{पहाड़ी} ^{पर्वत} ^{दिखाई} ^{दी} ^{दिशा}। यही

'मेडागिरि' है। इस के ऊपर एक जलोश

य है इस का जल निर्मल और मीठा

था। यह 'सर' ^{श्रेष्ठ} ^{चलुल्लेख} था

किनारों पर

मैं प्राचीन समय के बड़े बड़े लाराहे हूँ ^{२५}
भाड़ी का खेत करीब एक गज चौड़े और
एक दो ~~एक दो~~ फुट चौड़े पत्थर बिछाये गये थे जो
चिक्के और चिसे हुए लगते थे। तालाब
की सड़ की सड़ एवं गिरे हुए केवदासपुरी
के दुन्दुओं से भरी हुई ^आ था। सरोवर के

पश्चिमोत्तर ओर मैं एक मधुपीठ था जिस
पर कभी शिवलिंग रहा होगा।

हमने खाना पकाना प्रारम्भ किया
इतने में अस्मिता आकाश पर मेघमाला
आगई। हमारे साथ डेढ़ डेढ़ कोड़ी टैंग
नहीं था। यदि बर्ष होती तो बहुत कष्ट
हो जाता। ^{सब} सब ने महात्माजी की शरण ली।
उन्होंने कहा चिन्ता मत करो, कष्ट नहीं होगी
मैं बहुत राग गाता हूँ जिस से मेघ चले जा-
वेंगे। बादल काले और बस बनसने को
तैयार कर दीखते थे। मेरे मन में महात्माजी
की बात नहीं दौरी। किन्तु, आशुविजयो हूँ
उन्होंने गाना शुरू किया बादल छूटने लगे
आगे उपकाश कीरे धीरे निर्मल होगया

२६

रात में मजन पूजा और मन्त्रों करते
 हैं भीतांगी । रात: काल सन्ध्या पूजा लक्ष्मीनादि
 हिन्दु के साथ हीकर हनु इधर उधर
 अमल करने निकले । यहाँ घर रुक सजाव
 सा मैदान दिखाने दिया जिस में यज्ञ
 तत्र प्राचीन समय के मन्त्रों की आधार
 शिलाएँ और पथार ताराशे हुए मिले
 जेडे थे और बनेबने के लिये लहपान
 भी दिखाने दिये जिस में अश्वमेदी हिन्दु
 पूजा आदि के लिये देवताओं के लिये
 प्रसाद (चावल रानीर आदि) अर्पण करते
 थे । हनु बहुत ही गाना बहला होगे
 में भक्तवेष में रात भर सरोवर से
 कीचड़ निकालता रहा । जेडे हनु हनु से
 कि रात में महाकनिका लक्षण के
 गणेशनुसार यहाँ जागीरदारी का दर्शन
 हो । जेडे कि जगन्निने लिरवा है

'सरो मत दृश्यते यत्र
 हंस हनु सरस्वती'
 जेडे प्रथम जहाँ सरोवर में
 हंस हनु सरस्वती दिखाने देती है ।

महाराज का भोजन तैयार हो गया था
 हमने भोजन लिया। सामान बान्ध कर
 छोड़ो पर लाद लिया और भगवती
 को प्रणाम कर चले। साथ
 ७ पाजे करीब 'हाल' पहुँच गये। इस
 के १ दूसरे दिन में श्रीनारायणजी और
 महालाजी वहीं रहे। कहते थे श्री
 अम्बर प्रमरनाथजी का दर्शन करने
 जायेंगे।

प्रमरनाथजी की यज्ञा में उन्हें वापिस
 आते समय जम्बरुङ्गी (जम्बरुङ्गी) कड़ाव
 पर रात को रुकना पड़ा। वहीं पर प्रमरनाथजी
 समय उन्हें भगवन्-शिव और पार्वती
 के दर्शन युगल यौनभूषा में हुए थे।
 उन्होंने कहा कि आकाश तल लगे
 बड़े हुए आगिरूप से उन्होंने ने देखा।
 उनको केवल दोगे ही दिखि दी और
 फिर तब उन की दृष्टि नहीं पहुँची।
 इस बात का वर्णन 'महाला' जी ने मुझे
 कई वर्षों के बाद लाहलपुर (पाकिस्तान)
 में सुनाया था। ५.

४.

परशुराम स्तोत्र और परशुराम
जयन्ती - मातेरु में

स्वामी जी ने परशुराम स्तोत्र की
रचना की थी। उन्होंने अक्षय तृतीया
के दिन जो दिन में भगवान् परशुराम
का आदिर्माव का दिन माना जाता है -

भगवान् परशुराम जयन्ती शायद किसी
बार मातेरु (कश्मीर) में मनाये का
भीगोश किया था। यह शायद वर्ष ३५-३६
का समय था। मैं उन दिनों बनारस में ही जहला था
उत्सव अच्छी तरह मनाया गया था। इस को
जहला दिनों तक मातेरु के लिये ब्राह्मण याद करते थे।
तब तब स्वामी जी का 'परशुराम स्तोत्र'
शायद छपा भी नहीं था।

महात्मा जी को उन्होंने बहुत सी
ऐसी बातें बताई जिस से वह बड़े प्रभावित
तथा चकित^{भी} हो गये थे। महात्मा जी को
उन्होंने पूबिज्ज्व की भी बहुत बातें बताई
जो कि महात्मा जी को जिम्हसनीय प्रतीत
हरी। उस में कुछ जिलाक्ष्ण शक्ति थी
मैं तो चला आया था। महात्मा जी वारा
भूला में ही रहे थे और चक्का खाका
से समागत होता रहता था। परन्तु
चक्का खाका तो चक्का ही दे गये और
वाराभूला से कहें गये थे किसी को
कुछ पता नहीं लगा, महात्मा जी
तो कहते रहते थे कि चक्का खाका
बड़े पहुँचे हुए सिद्ध थे।

हरिद्वार में समागम

मुझे महात्माजी ने हरिद्वार
 से पत्र लिखा था कि बनारस से जल्द
 श्रीलालकाश बिताने के लिये कश्मीर जाऊँगे
 हरिद्वार में मुझे मिलना। यह सन् दूसरे
 वरी ३२ का वक्र था। मई के ~~अन्तिम~~ सप्ताह
 में मैं २ हरिद्वार पहुँचा। महात्माजी वहाँ
 एक धर्मशाला में ठहरे थे। उन के साथ
 नालागढ़ का एक सत्संगम नामक सेवक
 था। यह शायद जैशरणी का वक्र था।
 हमें धर्मशाला का - मैं स्थान नहीं
 मिला। एक कमरे में रहूँगे। हम
 रात बिताने के लिये स्थान की तलाश
 करते रहे। परन्तु कहीं जगह नहीं मिली
 रात के १२ बजने लगे थे। एक चुंगी
 का अरामदा मिला। वहाँ भी धूल
 से भरा था। रात को हम जहाँ सोये।
 धूमते धूमते धूलगंध के और फिर
 चलते की शक्ति नहीं रहनी थी।

सन्ताराम जी पुलिस विभाग में नौकरी करते थे।
 वह पेजाब चले गये थे। महात्मा जी के साथ
 मैं कुछ दिनों तक हरिद्वार में रहा। दिन को
 कनरबला, च-चली भावली का मन्दिर
 जो जोगा जी के उस पार जहाड़ी पर है
 देखने गये। जोगा जी से जो शारदा-
 कनाल निकाली है वहाँ पुल पर मैं और
 महात्मा जी खड़े जोगा जी की धारा को
 देख रहे थे। बड़े भावनेश में
 बोले हम तो जोगा जी के तरवर
 अपना अन्तिम समय बिताना चाहते हैं।
 फिर जरा बाहिमुख होकर बैठते हुए
 बोले जो ईश्वर की इच्छा। फिर
 ऊँचे लगे देखे यह आधुरी दुग है
 उस समय भी नांदों का मार्ग बदल
 देते थे प्रसुर लोग। इसी लिये देखे
 सपूशली में शुभाकर के ५ मारे के
 बाद ~~निश्चय~~ का लीन लिरना है
 'सरिलो मार्गवाहकः'
 अथवा उस दैत्य के मरने के बाद

नदियाँ भी अपने पूजिमाँ से चलने
लगी थी।

जवनरजल में लैठे कुछ समय तक बैठे।
नहो स्वामी जी ने जंगलहटी के कुछ
पक्ष मधुर ध्वनि से पड़े।

८ हमें रहने के लिये किसी
धर्मस्थल में स्थान मिल गया था। कुछ
भीड़ भी कम होगी थी। शुरु दिन
प्रति: जंगल जी के तर तर स्नान करते।
समय महात्मा जी ने जल में डी रखे
रहते जंगल जल हाथ में लिपा।
मुझ से कहने लगे 'श्री बाबा ! तुम
जल ले लो तुम्हारे प्राणिक कष्ट
दूर होंगे। मैंने हाथ जोड़ कर कहा
नहीं महात्मा जी ! मुझे ज्ञान की
कृपा ही चाहिये। धन तो इस के
बाद की चीज है। फिर उन्हें ने जरा
पुनः जंगल जी में डी डाला। मैंने अन्तम
किया शाम यह मेरी पत्नी था ही थी।
परन्तु वह बार बार फिर वह

३३
कई प्रसंगों पर कहते रहते थे कि निःलक्ष्य
सेह करनेवाले बहुत कम लोग हैं।

अभी कनरबल पर उनको गंगाजी का
दर्शन हुआ था। इस बात का वीज कई
वर्षों के बाद महात्माजी ने मुझसे किया था।
बात इस तरह थी:-

वही उरु था। स्वामीजी के साथ
कुछ और दो तीन व्यक्ति बैठे थे। गंगाजी
का पानी और उबाल चले गया था। वहाँ भी
उस समय हो रही थी। इतने में उन्होंने
देखा कि बीच धार में कोई नारी तैर
रही थी। उसकी बालों की लोटें पानी के
ऊपर फैली हुई थी। अभी वह नारी
सिर ऊपर उठाती थी और अभी फिर पानी
में गायब हो जाती थी। महात्माजी ने
प्रश्न साथ बैठे हुए व्यक्ति से कहा
देखो वह औरत एक इतनी तेज
धार में तैर रही है। जरूर उन्होंने
कहा हमें तो नहीं दिखाई देता। उन्होंने

ਕੁਝ ਘਰ ਦੇਖਾ ਕਿਉਂ ਉਥੇ ਕੋਈ ਨਹੀਂ
 ਦਿਖਾਇ ਪਤਾ। ਜਦਕਿ ਮਹਾਲਾ ਜੀ ਦੇਖ ਰਹੀ ਸੀ।
 ਉਸ ਦੇ ਕੰਮ ਮਹਾਲਾ ਜੀ ਹੁਣ ਰਹਾਇਸ ਦੇ ਸਮੇਂ
 ਗਏ।

✕:

X.

हरिद्वार से महात्मा जी मुझे अपने साथ
 'प्रतिक्रिया' ले गये थे। वहाँ से हम
 लखनऊ पहुँचा गये। वहाँ से जंगल के पार
 'गहड़ चट्टी' गये। वहाँ स्वामीजी ने कहा
 कि 'यहाँ पर जंगल में 'शिलोदक'
 भरना है। इस में कोई भी नमि वस्तु
 जैसे पत्थर आदि जानी में पत्थर
 बज जाते हैं। मैंने देखा नहीं। महात्मा
 साधुओं से सुना है।" • दिन डूबने
 लगता था। अतः उस लियार को डूबे
 भविष्य के लिये चौंठ कर हम फिर
 लखनऊ पहुँचा आये। जंगलजी के
 तरफ ही रुक रुकिया थी। उसी में
 रात बिताई। सारी रात महात्माजी
 शीन स्थिति में निश्चिंत कर दार्शनिक आदि
 भक्तों की चर्चा करते रहे। सुनी की
 उस रात को धाव कर रुक आकस्मिक
 प्रह्लाद का आत्मक होने लगता है।

शिमला में महात्मा जी से फिर मिलना

सन १९३६ में मेरी पत्नी हिन्दू विश्वविद्यालय में कोर्स समाप्त होनेवाला था। मद्रि में मुझे स्वाजीजी का पत्र मिला, लिखा था हरिद्वार से। सोलन के राजा हाइडर के साथ हरिद्वार जाकर थे। मुझे लिखा था लश्मीर जले समय हरिद्वार में मुझ से मिलो। मेरे पास बहुत सामान था। उसे दृष्टि में बहुत समय से महात्मा जी से नही मिला था। दर्शन करने की बड़ी इच्छा थी। मैं सारा सामान लेकर हरिद्वार पहुंचा। परन्तु महात्मा जी एक दिन पहले ही सोलन चले गये थे। मेरे लिये सन्देश दे गये थे कि सोलन आजाना। मैं हरिद्वार से चला कर प्रातः दस बजे लगभग कालका में हेशन पर पहुंचा। वहां से निराद्वार ही टैक्सी में बैठ कर दोपहर लगभग एक बजे सोलन पहुंचा। संकेत के अनुसार राजा-

- साहेब की एक छोटी घर की जो कि हीले कर
 थी + आगया। मन में लड़ी उत्सुकता थी
 कि अब महारानी के दर्शन होंगे। परन्तु
 महारानी वहाँ से शिमला गये थे। सामान
 वहीं रुका। देवयोग से राजा साहेब के सैक्रेटरी
 भी शिमला जा रहे थे। उन के साथ कारर
 की बैठा। मगर शिमला पहुँच कर फिर निराशा
 होना पड़ा क्योंकि महारानी वहाँ भी नहीं के
 वह शिमला से ६- मील दूर 'मिशोबरा' में
 राजा साहेब की वहाँ की छोटी घर रहते
 थे। मैंने मन में कुछ विचार किया था कि
 आज महारानी का दर्शन करूँगा तभी
 भोजन भी खाऊँगा वहँगा। समय लगाना
 जोचखड़े का था। मैं जैदल ही मिशोबरा
 की तरफ चलने लगा। झूझत हो गया था।
 मैंने अब निश्चित सा हो गया था कि
 अब महारानी यहीं मिलेंगे ही। परन्तु

ਸਦਾਨਾ ਜੀ ਕਹਿੰਗੀ ਨਹੀਂ ਥੇ । ਕੋ ਜੋਲਕਰ ਜੋ
 ਰਾਜਾ ਸਾਏਬ ਨੇ ਸਦਾਨਾ ਜੀ ਦੀ ਸੇਵਾ ਮੇਂ ਰਹੇ ਥੇ
 ਕਦੇ ਰਾਜਾ ਜਾਕਾ ਰਹੇ ਥੇ । ਉਨ ਦੇ ਜਿਧਿਤ ਹੁਤਾ
 ਕਿ ਸਵਾਮੀ ਜੀ 'ਨਰਸਿੰਹਪੁਰ' ਮੇਂ ਫਿ ਸੈਲਾ ਦੇਰਨੇ
 ਜਥੇ ਥੇ । ਯਦਪਿ ਮੇਂ ਕਲੁਤ ਪਾਕ ਗਯਾ ਥਾ ਤੇਰ
 ਮੁਕਾ ਵੀ ਥਾ ਯਦਪਿ ਮੇਂ ਯਦਪਿ ਸੇਵਕ ਕੇ
 ਅਨੁਸਾਰ ਕੁਰੰਤ ਵੀ ਨਰਸਿੰਹਪੁਰ ਦੀ ਤਰਫ
 ਗਯਾ । ਇਤਨਾ ਸੋਚਾ ਥਾ ਕਿ ਉਤਰਾ
 ਕਾ ਸਾਗ ਥਾ । ਮੇਂ ਕਹਿੰਗੇ ਕਦੇ ਹਥਾਨ ਕੋ ਸੀਲਾ ਹੁ
 ਰਾ ਹੋਗਾ । ਮੇਂ ਸਾਧੇ ੭ ਕੋਜੇ ਕਹਿੰਗੇ ਘੁੰਮੇ ।
 ਸੈਲਾ ਲਗਾ ਹੁਤਾ ਥਾ । ਮੇਂ ਕੁਝ ਕੁ ਲੋਗੋਂ
 ਸੇ ਪੂਕਾ । ਯਦਪਿ ਲਗਾ ਕਿ ਸਦਾਨਾ ਜੀ 'ਟੀਕਾ'
 ਸਾਏਬ [ਕੀਟੇ ਸਾਮੰਤ] ਕੇ ਸਾਥ ਜੁਲਾ ਦੇਰਨ
 ਰਹੇ ਥੇ । ਮੇਂ ਕਹਿੰਗੇ ਕਹਿੰਗੇ ਕੋਲਕੁਲਾ ਹੋਰਾ
 ਥਾ । ਯਦਪਿ ਲੋਗੋਂ ਦੀ ਮੀਤ ਥੀ । ਮੇਂ ਕਹਿੰਗੇ
 ਸਦਾਨਾ ਜੀ 'ਟੀਕਾ' ਸਾਏਬ ਕੇ ਸਾਥ ਕੁਝੀ ਯਦ
 ਕੀਟੇ ਥੇ । ਕੋ ਵੀ ਰਾਜਾ ਦੀ ਠਾਠ ਮੇਂ । ਕੋਸ਼ਾ ਸੁਯਾ
 ਮੀ ਪੈਲੀ ਵੀ । ਕੋ ਸਿਧਾਵੀ ਨੇਗੀ ਲਗਾਕੇ
 ਵਾਹ ਮੇਂ ਲਿਖੇ ਹੁਏ ~~ਕੋਸ਼ੇ~~ ਰਜਸਾਏ

टीका साहेब और महात्माजी के दोनो बगलों
 में खड़े थे। बहुत सख्त महात्माजी से
 मिले हुए के भीता था। मैंने समझा जता
 नहीं कैसा व्यवहार होगा। अन्दर घुसने की
 ज तो खासा ही थी न मैंने साहस करेगा
 उचित ही समझा। परन्तु मिलना तो आकस्मिक
 था। अब भी तो पीठ की तरफ में खड़ा था।
 मैंने एक लंबी सी जलली लकड़ी लहो
 से उठाई और महात्माजी के पीठ तक
 पहुँचाकर उस से उन का ध्यान आकृष्ट
 किया। उन्होंने पीछे की तरफ देखा। मुझे
 देखते ही तुरन्त कुर्सी पर से खड़े हो गये
 टीका साहेब भी खड़े हो गये। टीका साहेब
 से मैंने अधिक प्रशंसापूर्ण परिचय देने लगे।
 फिर कहा टीका साहेब। मैं आब जा रहा हूँ
 आपके तो जे बड़े रात के लिये। परन्तु
 भर पेट भरे साथ चल पड़े। टीका साहेब
 का आग्रह नहीं माना। यह सब मेरे
 रक्खाल में पाँच मिनटों में ही हो गया होगा।

हम दोनों वहां से जल कर एक घरे में
 मशौखना पहुँचे। भोजन कर के वहीं रुक
 हमारे में - जो केवल लकड़ी का बना हुआ एक सुन्दर
 बौद्ध की तरह लगता था। सारी रात महात्माजी
 और हम बातें करते रहे। 'श्री' जी को
 उस दिन कितनी प्रसन्नता हुई थी। मैं सच मुच
 मन में ही अपने को भाग्यशाली मानने लगा।
 दूसरे दिन सबरे ५ बजे उठे और तुरन्त
 अपनी नित्यक्रिया की। भोजन कर के जोरों को
 सोलन चलने को कहा। हम उसी दिन सायं
 ५-६ बजे सोलन पहुँचे। सोलन में श्री-ठान के
 साथ १०-दिन रहा। बहुत प्रमत्त गर्मी थी।
 हमें भी महात्माजी राजमाताजी के पास दूध
 बिठा कर भोजन कराते थे। माताजी बहुत
 आदर करती थी। हम दिन को कई योगासनें
 करते थे। महात्माजी ने यहीं पर 'स्वाध्याय'
 पाठिका निकालने की योजना बनाई थी। हम के
 लेख निरन्तर होते रहने के लिये कहा।

स्वाध्याय पत्रिका निकालने का मुख्य कारण यह था कि 'श्री हरदेवशर्मा त्रिवेदी' को जो कि ज्योतिषी सुबोधवल्लभ जी. प. आर्यगुरुजी के प्राध्यापक में 'कुशल' (जालमर) में सहयोगी के रूप में काम कर रहे थे। उनका प. आर्यगुरुजी के साथ भगदा हुआ। और वह अब नया स्थान देखते देखते थे। महात्मा जी के तो वह पहले ही परिचित होगे थे। उनको अब वह सोलन में ही राजा साहेब की कुतुब्बा में रहने का प्रयास कर रहे थे। उनको कोई काम भी मिला जाऊ और उनको ज्योतिष का काम भी चलाता रहे इस लिये 'त्रिवेदी' जी के सोलन में ही रहने का विचार बना रहे थे। इसी अवसर से 'श्रीस्वाध्याय' पत्रिका को त्रैमासिक क्रम से प्रकाशित करने की भी योजना बन गई थी। उन दिनों में हरदेव जी के वहां नहीं थे। बात योजना के साकार रूप में चलाया नहीं देखा। मैं तो 'जशमूर' आगया जहाँ महात्मा जी नहीं रहे थे।

४१

लालपुर [जश्मीन पत्राल] में

सन १९४० में लालपुर में नौकरी
करने लगा था। मीर फौज शायद नवंबर
का महीना था और सन् भी १९४४ ही
वहो रहते हूँ कुछ ही महीने हुए थे। महारा
जीनेत आदेश के अनुसार श्री हरदेवजी जी
मेरे पास आगये। श्री स्वाध्याय के प्रकाशन
तथा पुस्तक के सम्बन्ध में दो दिन लिखारं
करते रहे। मैंने भी 'लेख' दिया जिसका
महाराजीने ही कहा था 'जश्मीनी पत्रिका'
का संस्कृत साहित्य में योगदान' ऐसा ही कुछ
लेख था। सन् श्री स्वाध्याय के प्रकाश
न के पहले संस्करण में मुद्रित हुआ था।
श्री हरदेव जी दो दिन रहे। फिर सोलन चले गये।
अब 'श्री स्वाध्याय' प्रेमालोक के रूप में ही
निरन्तर छपता रहा और मैं भी लेख
भेजता रहता था। यह पत्र अल्पसमय में
ही प्रसिद्ध होने लगा था। परन्तु कुछ लोगों
के बीच ही रुक गया। इसका कारण मुझे
पूरी रूप से पता नहीं।

महात्माजी का 'लाहुर' (पाकिस्तान में)

यागमन

सन १९४३ का शायद नवम्बर मास था। मैं स-ध. उत्तमकुल अश्वमेध में स प्रोफेसर और प्रिन्सिपल के जेजुर आतीन था। मुझे यह आशय 'गोस्वामी गणेशदा' जी के द्वारा प्रतिष्ठित हुआ था रावी की प एक बड़ी नहर पर अकस्थित था। स उत्तमकुल की दरिदारी के अनुसार संस्कृत हिन्दी एवं अंगरेजी की शाखा दी जाती थी। लड़कों का ऐसा शास्त्र और पठनपाठन का ही बालाकरण था। दो सौ के लगभग विद्यार्थी थे। उनको भोजन भी निशुल्क दिया जाता था साथ में एक गणेशालाय भी। मुझे भी आर्ट्स मिला हुआ था और मैं वहाँ कृष्णवर्धन का भी अधिष्ठाता (सुपरिन्टेण्डेंट) था। छ मकरान से छुपकर से सैरिंग सैरिंग भाँज में प्रातः सायं निद्यादि को सी जाती थी। रात को एक एक जाग दूध प्रत्येक निद्रा को मिलता था।

भीजी ०८ मेरा जिनह भी उसी नरक
हुआ था अतः मैं गृहस्थी की तरह सब बहो
रहने लगा था । । अगस्त/१९४० मास था ।

जब नवरात्रि के दिनों के बाद ही महात्माजी
बहो पधारें । उन को बहो पर बहुत मन लगा
क्योंकि बहो उन को गन्धकादूध , शुद्ध भोजन
तेथा धूमने के लिये नदी का किनारा जैसा

कि उन्हे अस्मिता था चादिये था- सब
सुलग्न था । दिन भर हमारी साहित्यिक
तथा शास्त्रीय चर्चा चलती थी । क्वार्टर में
कुछ देवी बिभीकिकारे होती थी । महात्माजी
के जन्मदिन रहने से सब दूर होगे ।

मुझे प्रातः ही उठ कर गोकुल का पुजन करना
पड़ता था क्योंकि महात्माजी रोज गोकुल से
पुलियां करते थे । रहते रहते महात्माजी
बहो श्रम मास रहे । बहुत ज्ञान की
चर्चा होती थी वह सच था आता है
मालूम पड़ता है वह सत्यपुरुष का ही
सम्बन्ध था इस बात को बहो दिल्ली में भी

कहो दिल्ली जे

महात्मा जी ने कई बार कहा। महात्माजी
रात को हम को खीर दूधारी पत्नी को कड़ी
विस्मयकारक और अनैसी साथ भीती हुई
कहाये सुनाते थे। उन्होंने मुझे कहा था कि
इन कहानियों में ^{पर} ~~भी~~ 'उद्भुतकथा' नाम देकर
एक संग्रहात्मक पुस्तक लिखना। परन्तु
यह उन का कथन अभी तक ^{प्र} क्रियान्वित
नहीं हो पाया।

जैसा कि महात्माजी का स्वभाव था
 मुझे कहना पड़ा मुझे ज्ञाते ही कहा कि देखो
 यहाँ पर मेरा परिचय लिखनी को नहीं देना।
 मैं तो किसी से उन की कोई बात नहीं
 करता था। नहो संस्कृत के कई विद्वान्
 थे जो कि वहाँ पर भाषायाज्य करते थे।
 मुझे पृथ्वी रहस्यें परन्तु मैं दालता
 रहता था। मेरा उन के साथ व्यवहार भी
 वह देखते थे और वह समझ जाते थे कि यह
 इन के गुरु हैं। मैं संस्कृत की 'शास्त्री'
 कहता उन्हें को भी पढ़ाता था। वृत्ति मेरा
 बहुत सम्मान करते थे। मुझे कहते थे कि
 वंश के गुरुजी आप हैं। मैं दालता था।

एक दिन मेरा एक अध्यापक जो न्यायाचार्य
 और व्याकरणविद भी थे। संस्कृत में ही लायबिनाय
 हुआ। जीवन जीता? जीवन द्वारा बहते
 प्रलय कात भी परन्तु वास्तव में लड़के भी
 उस पण्डित जी को घर-होते थे। मेरे मन
 में कुछ सेशय रहा। मैंने शतको महात्माजी
 से बातचीत हमारी शैली का समाधान होगा
 मेरा ही विश्वास ठीक था। इतने में दरवाजा
 खटखटाने लगा दरवाजा खोलो तो अध्यापक
 और कुछ लड़के जो हमारा कर्मोपलक्षण
 सुन रहे थे - अन्दर आगये। फिर महात्माजी
 स्वयं पुकार दोगे। इनमें स्वर्गीय पण्डित
 जगदीश जी ^{चौधरी} उन दिनों वहाँ पढ़ाते थे - महात्माजी
 के भक्त दोगे और महात्माजी को
 अपने घर फुलारवाण (जन्मस्थान) आते
 लगे। वहाँ भी महात्माजी के बहुत
 से सेवक बने गये जो आज देहली,
 मथुरा आदि नगरों में रहते हैं। श्रीरघुनाथ चन्द्र
 शास्त्री भी प्रसिद्धि में आध्यापक थे। आज डेहराडून
 में रहते हैं। यह भी महात्माजी के भक्त बन गये।

पुरजिकुल आश्रम लाडलहर (पं. पंजाब) में
महात्माजी की रुक घटना और भी लिखता
हूँ । है तो बात मैं से कुछ नहीं परन्तु इस के
महात्माजी को मिलाना क्रोध कमि कमि रहता था
इस का आभास लगता है :-

महात्माजी ने हमारे कार्टर के अग्रगण्य
में रुक सीसी पर अपने घुटने के तैलिये
आदि घुटने के लिये डाले थे । उन में उन लो
रुक लालरंग का लेंगेट भी था । उस को
बंदों के रुक रसोइया ने पकड़ा लकड़ियों
जहाँ सफ दूसरे स्थान पर लटकाया था
उस पर चौक ने बोट कर ली थी । महात्माजी
ने देखा तो बहुत खिन्न हुए उस प्रायणी को
बुलाया और बहुत डाँटा । उसने कुछ
कहा होगा इस पर स्त्रीजी बहुत क्रोधित
हुए । हमारी पत्नी उन से हाथ जोड़कर
अधमा मोगने लगी , आदमायन और लड़के भी
कुछ आगे और धमा मोगने लगे । मैं से तो
बद रसोइया बहुत शरीफ था । परन्तु मुझे
कहने लगे इस को अभी निकालो नहीं तो
मैं यह स्थान ^{अभी} छोड़ दूंगा । मैं बहुत
निकरिगनिरुह होगया । बहुत दूर जाय

शांता होगये । वैसा क्रोध मैं उसी दिन महाला
जी को करते देखा । ये तो आशुतोष जी ^{की} ~~हैं~~ ^{हैं} ~~हैं~~ ^{हैं}
जैसा कि महाला कि आलियास ने कहा है —

उष्णत्वमृदातयसंप्रयोगात्-

शैत्यं दिष्टत् सा प्रकृतिर्जलस्य ॥

अर्थात् अग्नि का धूम में रश्मि भर जल मले
ही गर्म होजाय परन्तु फिर ठण्डा ही होजाता
है । क्योंकि शीतलता जल की अपनी
प्रकृति है ।

लायलपुर से महालाजी और भी
कई स्थानों पर घूमते रहते फिर लाहौर हमारे
पास आये थे इन में जोजरा, ईसारेखला,
आदि कुछ मुख्य हैं । यह सब अब पाकिस्तान
में चले गये हैं । हमारी जी को सेना कोई सैनी
जातक सज्जन था । अब तो वह शायद यही नहीं
रहते हैं । उन से मिलने के लिये ही महाला
जी उस ^{संस्कृत} गये थे । ऐसा मुझे पता है ।
तारफ

महात्मा जी

४८

मुजफ्फराबाद [कश्मीर]

में

सन् १९४६ में महात्मा जी मुजफ्फरा-
बाद [कश्मीर] में थे वह सब तथ्यान्वित
आजादकश्मीर में है। वहाँ पर उन्होंने
एक ऐसा स्मरण दिला था जिस से वह
उनको स्पष्ट आभास हुआ था कि वहाँ
पर ब्रह्मोंग होगा और हिन्दुओं पर
घोर ^{संकोट} ~~घोर~~ आयेगा। इस की सूचना
स्वामीजीने अपने भक्तों को जो कश्मीर
में रहते थे-पत्र द्वारा दी थी। मुझे
भी सन् १९४६ की गर्मियों में मातंग में
जगिन्दा शिवजी कोतवाल ने पत्र दिखाया
था। यद्यपि उस समय पश्चिमोत्तर
सीमाप्रान्तों में ^{उदयपुर} ~~जम्मू~~ शुरू होगी ये थे।
श्री स्वामी और इस की सत्यता पर
निश्चयकरना उचित दी था परन्तु
तो भी इस पर शतप्रतिशत
कौन निश्चय करता। फलतः १९४६
के - भारत निराशा के ^स ~~संकोट~~
वह सत्य ही ~~निश्चय~~ प्रमाणित हुआ।

भारत विभाजन के बाद देहरादून में मिलना

वर्ष ४६ में मैं कश्मीर अपने घर ही आ गया
मेरे पूर्वपिताजी का स्वर्गवास होगा। मैं
अपने गेव में ही लीनिल खेलकर प्रैक्टिस
करने लगा। काम बहुत अच्छा चला। उनका
सेकट आये, व मुझे पदचर पर महात्मा
जी की इस उपस्थिति का अभाव रजतलता
था। यद्यपि मैं किसी अन्तःप्रेरणा से यह
निश्चित रूप से समझता था कि महात्माजी
कहीं ^{नहीं} प्रत्यक्ष सुरक्षित रूप से होंगे। परन्तु
कहाँ? जिस से पूछे? कुछ समय में नहीं
आ रहा था। मैं कश्मीर से अपने सहयोगियों
को खोजने के लिये सन् ४६ ई. में जेवरी
मौस में रास्ता खुलने पर सफलतापूर्वक
अमृतसर आया। वहाँ से कपूरथला लुधियाना
होता हुआ दिल्ली आया। परन्तु महात्माजी
कहीं पता न चला और ऐसा कोई
परिचित भी नहीं मिला जो महात्माजी
का कुछ पता देता। मेरा सत्य सहपाठी

जो मेरा अभिन्न मित्र था और एक संपन्न
 गढ़वाली परिवार का था। उस से मिलने के
 लिये मैं देहरादून गया। वहाँ अपने
 मित्र गंगाधर साहू आसवाल के घर सहारनपुर
 स्टेशन पर रुक गया। परन्तु मेरा मित्र अब
 इस से सहर में नहीं था। मैं मेरा एक
 कच्चा बड़े तारामन्त्र भूषण य जो लायलपुर में
 मेरे साथ नटकुल शास्त्र में मेरे साथ काम
 करता था। उस ने मुझे अपने घर आने के
 लिये जोर दिया। जहाँ पर मैं ६-७ दिन
 रहा। तारामन्त्र मुझे कहने लगा कि
 डाक्टर जी मुझे एक बात आप से
 कहनी थी परन्तु कैसे कहूँ ? मैंने कहा
 कौन सी बात है ? सेक्रेट क्यों करते हो ?
 कहा। उस ने कहा बदनामी उचित है
 कहता हूँ। और बोला आप के बड़े पुत्रजी
 जो आप के पास लायलपुर में रहते थे,
 यही राजकुल निराश्रित है। ~~यह~~
 मैंने उन से कहा था। डाक्टर जी का
 शायद वही भावजन हो क्योंकि कि उन का
 पत्र आया था। उन्होंने मुझ से कहा है
 कि देखो उन को आप मेरा पता नहीं
 बताओ। ~~कह~~ नहीं कहना।

मैंने कहा जाता है कि वह कहां रहे हैं,
 उन्होंने कहा कि पता तो उन्होंने नहीं बताया
 परन्तु वह हमारी दुकान के सामने सामने
 से कुछ कभी कभी गुजरते मैंने देखा है। एक दिन
 फिर बैलचोग से ही महात्माजी चलकर बाजार
 में जाते हुए मिले। लडा रुक होगया।
 वह उन दिनों अपने एक सेवक के पास
 रहे थे। वह स्थानकोट (पंजाब के रहने वाले
 थे और एक जैनमठ का काम
 करते थे। महात्माजी के अत्यन्त प्रेमी
 और सेवक थे मैं भी महात्माजी के
 साथ कहीं एक दो रात रहा था। इस के
 बाद मैं उन की आज्ञा लेकर चला।
 देहरादून से फिर दिल्ली और बाद में कपूर
 आगवा था। फिर महात्माजी के जन्म की
 वदा कहा आते रहते थे। अब तो पुनः
 पूर्णवत् सम्पन्न स्थिति होगया था। हो
 महात्माजी ने मुझे दिल्ली में श्री दे
 गेविकजी मिश्र - जो भरतपुर के निवासी
 थे - से मिलने को कहा था। मैं दिल्ली में
 उन से मिला था और उन का भी
 पूरा संस्मरण शुरू होने लगा था।

भरतपुर में पुनर्मिलन

जैसे तो महात्मा जी आयावर कृति
 के थे। उनका पत्र साल में एक बार
 ही आता था। जसु उनका हथपीपता
 जेजिमजी मिश्र का भरतपुर बौ बुझी बही
 होगया था। मैं कश्मीर से अब
 दिल्ली आगया था। यही पर मुझे
 १९५४ में मूलकरनैराती शत्रु सिंहासनाल
 में मौजूद फिलगडि भी आतएक में जब सन
 १९५४ के आगस्त मास में दिल्ली में
 ही रहने लगा था। यहाँ फता चला कि
 महात्माजी भरतपुर में निराजमान हैं।
 मैं दरीन करने के लिये एक महीने के
 बाद ही भरतपुर चला गया। महात्माजी
 उस समय मिश्र जी के घर पर नहीं रहते थे
 एक पास की ही पहाड़ी पर एक खूब
 कुटिया में साधना करते थे। मिश्र जी कहते
 जागे कि स्वाजीजी १२ बजे तक आजायेगे
 मैंने कहा चलि के वही चलते हैं। बह
 और मैं दोनों बड़े गप्पे महात्माजी
 ने पठ समाप्त कर दरवाजा खोला

शुद्ध की बाई महात्माजी जैशमका से कुछ
बदले हुए लगे। लेकिन उनका उसी प्रकार
था। वह लगभग सड़ने लगे लोगों के बाद
शुद्ध की बार दर्शन हुआ था। उस रात बड़ी
गोबिन्दजी के घर रहे। ५-६ घंटे दिन में साध
स्वामीजी दिल्ली आये थे। जेठवाले सलमान हस्पताल
में ही दो दिन ठहरे थे। मेरे परिवार अभी तक
कश्मीर में ही था। मैं अकेला ही रहता था। दिल्ली
स्वामीजी के बारे में बहुत जनमये थे। दिन में
श्रीमद्भारतवृद्धपति त्रिगुणा सराफकाले रान
निजामउद्दीन दिल्ली नहरिल्ली में रहते थे उन के
घर महात्माजी रहने लगे थे। फिर हिन्दुस्तान
होमिंग फैक्टरी जैशपुरा का मैं भी
जी.डी. ककशीसाहेब के चहे रहते थे।
श्रीमद्भारतवृद्धपति त्रिगुणाजी उन दिनों मेरी
बगल में रहते थे। इन सब भक्तों के
पास से भी यदा कदा रहते थे।
कुछ समय श्रीनिवासपुरी में रहनेवाले
नित्यानन्दजी के घर पर रहते थे।
सुखे

✱

मानसरोवरगार्डन दिल्ली में उनके ~~सेवा~~ भक्त
भी जै. के. आनन्द साहेब रहते थे। उनके
घर घर महात्माजी बहुत दिनों तक रहते थे।
में उन दिनों लिब्ररीकालेज में रहता था
फिर श्री हरिनगर में रहने लगा था।
महात्माजी इन दोनों जगहों पर मानसरोवर
गार्डन से मिलने आते थे और मैं भी
जाता रहता था। श्री दई के कार्तिक
के महीने में भी यही रहते थे और मैं
उनकी आज्ञा लेने मानसरोवरगार्डन
आता था। महात्माजी ने पूरी सहमति
मेरे - 'मथुरा' जाने के लिये चुकट
नहीं की। मुझे मथुरा में श्रीकृष्णजनमस्थान
में वैष्णवधर्म के धनाथ साधुर्वेद फार्मसी
के प्रतिष्ठानक स्वीय श्रीरामनारायण
शर्माजी ने अपने नये खोले हुए
साधुर्वेद ग्रन्थालय के मु. में आने के लिये
अतिशय दिया था इसी सम्बन्ध में, मैं ६
महात्माजी से वहाँ मिलने उस समय
मिलने आता था।

श्री बाबू लाल जी सपरिवार उन दिनों श्री निवाह
पुरी में रहते थे। जिनसे महेलाजी के
दिल्ली में बहुत से बहुत और सेवकों का मदद
सा एक जमा था। जब भी महेलाजी जेजब
का मन्त्र जाले थे दिल्ली में वापिस आते थे
और आते ही सब मन्त्रों को सूचित करते थे।
फिर तो सती श्रद्धालु उनके पास स्वयं
आते ही रहते थे।

जब महेलाजी रौ पड़े थे

सन १९६२ के सितंबर का महीना था
भारत और पाकिस्तान का कुछ चल रहा था।
हमारा लड़का अश्विनी कुमार जो उन दिनों
दिल्ली के का ही था और दूसरी बेरारी में
पास के हाईस्कूल में पढ़ता था - हम
शाम को घर नहीं आया। हमने हर
जगह तलाश किया परन्तु कुछ पता न चला
बाद में हमने समझा कि उस का अपहरण
किया गया होगा। वे पास के बाजपत नगर
थाने में भी रिपोर्ट की। महेलाजी
उन दिनों श्री निवाहपुरी में रहते थे।
रोज हमारे पास शाम को आते थे।

हमारे परिवार वालों का बहुत बुरा हाल था।
 हमारे 'बैलौक' काउच होता था तो भी
 हम शतकों भी के दूकले ही रहते थे।
 जब महात्माजी आये और उन को बताया
 गद तो बालक की तरह रोने लगे। अर्थात् मैं
 उनको कभी भी दूकले या बाद में भी रोते नहीं
 देखा है। हमें सात्वत देखा देते थे।
 प्रताप फिर कहे कहने लगे निन्दा मत करो
 आजाओगे। अगले दिन तब महात्माजी दिन में
 दू-दो बार भी निन्दा पुनी के हमारे घर
 आते थे। कहते थे प्रमीतक नहीं आया। मैं जब
 ध्यान में बैठता हूँ मुझे तो लगता है आरुह
 है। मुझे इस से होखला तो होजाता था
 परन्तु उधर दिन नीत रहे थे कहीं से कुछ
 पता नहीं चलता था। अगले दिन के बाद ऐसा
 कि उन्होंने कहा था 'सोमवार' को यहाँ आयेगा
 वीक उसी दिन गद घर खुद ही आया
 बाद में उस के निवेश से इस बात का समझा
 पता चला कि गद अम्कई लेजाया गया था।
 मुझे महात्माजी का गद रोना और उनकी
 गद लडपन जब जाब पाव आती है मन
 में उन की वह स्नेहभावना मेरे अन्तराल
 को अब भी कूती हुई सी प्रतीत होती थी।

उन जैसे बिलरग डानी महाला का इस
 प्रकार सेना और उन का राज भी निवासपुरी
 से मेरे कठोर मूलमन्त्र हासिल तक दो दो
 बार जाना मैं या हमारा परिहार
 करीब नहीं भूल सकता। यह उन को आशीर्वाद
 और भजना का ही प्रभाव था जो बख्शे
 जैसे दूर शहर से प्रबोध केवल हृदय की
 अवस्था वाला बालक स्वयं सकुशल घर पहुँचा।
 और वह भी उस समय में जब रात को
 बलीक आउट होता था और दिन को भी
 कई रंग का वातवरण बनता जाता था।

जहाँ जहाँ महात्माजी को विशेष चमत्कार
देखने को मिले:-

पुष्प (शारिका) पर्वत श्रीनगर कश्मीर -

एक चटना सन् ३०४३० से
१९३५ के. इस जमी में हुई होगी। महात्माजी
ने कहा वह एक शारिकादेवी के आंगन
में - जिसके 'देवी-आंगन' के नाम से कहा
जाता है - एक दिन साधे भजन कर रहे थे।
एक पण्डित - जो तेज स्त्री और कश्मीरी
वेशाभूषा में था - वहाँ आया। और महात्मा
जीको देखता रहा। फिर सामने आकर
पूछने लगा 'बाबाजी' 'मर्यादुल्लिनी
का पद सुनाओ' ['माया कुण्डलिनी' शब्दों
पद 'पद्मस्तोत्री' के लघुस्तोत्र का है
और प्रत्यः कश्मीरी पण्डितों की
मद्विज्ञाते भी इसको 'महात्माजी उन दिनों
बोलती थी] महात्माजी ने सुनाया।
आगतुल ने कहा 'अपे भी सुनाओ
महात्माजी ने सुनाया। फिर उन्होंने
भी इस पर कुछ अर्थ की व्याख्या की,
महात्माजी बड़े प्रभावित हुए। आगतुल
ने कहा 'आप क्या मेरे निवास स्थान

पर राजावा नही खाते करेगे। ^{५८} उन्हे ने
पताभी बताया। दूसरे दिन महारानी
१२ बजे ही उस सैक्रेतिल स्थान पर
[हठ्ठाकदल] पहुँचे। दरवाजा खुला ही था।
महारानी सी धिया चढ़ कर ऊपर रुक
खुस उन्नत करे में पहुँचे। नट पण्डितजी
नही विराजमान थे। महारानी उन
के जालीलाय में बिन रहे और उन्हे
बहुत सी शोकाओं का समाधान हुआ।
उस पण्डितजी ने बार बार कहा मैं तो
छन्दारे ही लिखे मेजागया हूँ। परन्तु
महारानी उस का स्टैक. रहस्यमय
सैक्रेत नही समझे। पण्डितजी ने कहा
यह शाम हो गई है जाइये। महारानी
चलने लगे और कहा क्षीमान्जी मैं कल
फिर इसी समय आऊँगा। पण्डितजी चुप रहे
कुछ नही बोले। दूसरे दिन महारानी विल
उसी समय वहाँ पहुँचे परन्तु वर दरवाजा
बन्द था और ऐसा लगता था जैसे कोई नया
से यह बन्द ही है। महारानी इधर उधर
देखने लगे कि कहीं यह और जगह तो

महती । वहलु पागट बड़ी थी । महात्माजी ने उसी मकान के सामने वाले घर में ठाकुरजी दी । वहाँ से एक यात्री निकला । महात्माजी ने कहा क्यों जी । इस मकान में जो पण्डितजी रहते हैं वह कहाँ गये हैं ? उस यात्री ने हेरान होकर कहा यह तो कई सालों से बन्द ही पड़ा है आप किस की बात बता रहे हैं । यह तो २० वर्षों से बन्द ही है । इस मकान का कारिग तो अब कलकत्ता में रहता है । महात्माजी ने बड़े विस्मित होकर और उन्होंने ने फिर कलकत्ता जाते जो उस रिक्काबुस के साथ हुई थी मन में याद की और उस का स्मरण रहस्य समझने लगे ?

कोटी तीर्थ बाराहना में (शैलपुत्री में)

यहाँ पर महात्माजी को एक प्रकार से आत्मसाक्षात्कार का तत्काल हुआ था उन्होंने जैसे कि खारी रात में अपने भाग में ही विराट के दर्शन किये थे, वह और उन्हें यह भी प्रतीत नहीं हुआ कि रात को से द भीती ।

इसका इस का घनीन वह क्या कर ले
 यह तो अनिर्वचनीय आस्था थी। हो जैसे
 भी मनुभवगीता के द्वितीय अध्याय में

‘प्रोक्ष्यलत पश्यति कश्चिदेवम्’
 इत्यादि पद्य से इस की आलिंगनीयता
 को भागवान् ने कहा है।

‘पञ्चतारणी’ अमरनाथ कश्मीर में

जैसा कि पहले लिख दिया है
 यहाँ पर महात्माजी को आश्रित
 यौन मुद्रा में शिवपार्वती का दर्शन ^{महेश्वरादि} ~~सुख~~
 काल में हुआ था। स्वामी जी ठेठ के
 बाहिर लघुशंका करने निकले थे और यह
 दृश्य देखा। वह खड़े खड़े ही देखते रहे
 जब तक प्रभात का समय होने लगा था।

साधुगंगा आश्रम कश्मीर में

यह स्थान कश्मीर के पश्चिमी
 तर प्रान्त में अवस्थित था। उन दिनों
 प्रचीन विमान के ~~व्य~~ व पहले यह
 साधुमहात्मा ठहरा करते थे। यहाँ पर
 महात्माजी को कई दिवस और सिद्ध महाप्रह्व

६२

दिरगदि दिये थे। जिस से जका जाले
हरे धी घट उन्हे ने नही कहा या मेने ही
नही पूछा ^{जह} मल याद नही।

मथुरा में समागम

मेने सन् १९६१ से सन् १९६६ तक
मेने मथुरा में था - मेने श्रीकृष्ण जन्मस्थान
के कुछ दूर के अलग-अलग जैष्ठनाथ के मठों की द्वारा
सेकालित आधुनिक-उत्तु स्थान के लु में
था। 'श्री' जी यहां इन आठने में
प्रायः दिल्ली का मथुरा आते जाते रहते
थे और मथुरा में भी कई दिन ठहरते
थे एक बार तो लगभग एक सप्ताह तक
माथियों में रहे थे और फिर दो
तीन बार माथियों में भी १-२ दिन रहे थे
थे। खूब हमारी बातें चलती थीं। परन्तु
अब तो महात्मा जी का स्वास्थ्य ठीक
नही रहता था। मेने कई बार उन से

अनुरोध किया था कि आज अब यह धूमते
रहने का व्यापार छोड़ दीजिए ऐसी सामान्य
परिस्थिति में रहना आप के स्वास्थ्य
को और भी कमजोर करेगा। कई बार तो
मेरे आकस्मिकों से उन्हें सरोख भी कहता
था। वह चुप रहते थे। 'बिन्दु मेरा'
विचार है कि वह आरामवर्क में जो
करीब दसवें तक पहुँच चुके 'दिल्ली में'
ही रहे वह शायद मेरी सम्मति को
उन्होंने समझ लिया था।

मथुरा में वह 'भूलेश्वर' के दर्शन
करने रोज जाते थे। 'महाविद्या' के मन्दिर
में भी जाते रहते थे।

'श्री' जी के कुछ पद्य - (फुटकर) अन्वेष
 (यह उन के मुख से मैंने सुने हैं
 जो मुझे बताते हैं)

कासार प्रति -

ये रे ! कासार ! मुखा जिह्वादभरितें
 मा मानसं त्वं कुट ।

पङ्क्तिधेन युते वहामि कृपणो दयायुक्त सदैव हृदि,

पृथ्वीपाल-वधू जिलेसु मनोहरिणि ते कारिणि,
 जायन्ते कमलानि यत्र मधुपक्रांतैः सुरैः श्रीयते ॥

जिह्वं प्रति

स हृदयं जिह्वयेतं भागमंशुषा कदापि

प्रकृति-मधुरनामं कृष्णोदये निरीक्ष्य ।

लिलसति मधुमासे मानसं मोहयन्तो

धवलानुललाः किं सौख्यमुत्पादयेयुः ॥

चन्द्रोदयं निन्दये. (भित्तं प्रति)

तृतीयायां क्षिप्रं तुहिन किरणं -
वीक्ष्य निन्दति,
प्रदोषे मेघासं सनयसमधो जायते
रसिकः ।
अये मेघालेखे निन्दति च निन्द्यं
न शशिनो,
तु मेघे कामिन्नाः प्रसूति निन्दतः
कन्दुक इति ॥

समस्या प्रति कृते (प्रकृष्टगद्यं भगवतो जगन्निम्न)

कदा भामा भामापनयनं कदाभाति रहसि,
सुदामानं कामं पुनरपि कदाभाति बहुयन्
कदा सिन्धोः पश्यन् बहलमुभगा हृदयं लह
मुदा हारावत्प्रां निहरति सदायं यदुपति ।

मलदण्डन निन्दये

चिरभस्तो दूरादहमुपगतो हन्तः

मलसाह -

तेदेनां त्वदुज्ज्वले सुन्दरिणि परिगोष्ठ्यानि तनी

~~समीरेने~~

समीरेने न नवकुसुमिता चूतलतिका,
धुताना मूधति नहि नदि नहीलेन कुहेले ॥

भागवती प्रति निवर्धेपुतात्मनः

आदि का नद शनि भागिनि
शरणे के करवाणि सप्रतम् ।
लेहेले नदि कश्चिदस्ति मे,
वसुधायां शरणे मनागधि ॥

नैव लोक-गोचरा न किं
सकले ये मम दुःखशान्तिवे ।

समलङ्कार मंगलेन मां

समले मां किमु शोके सुतम् ॥

अत्राधारी वृत्त

इस वृत्त का निमील स्वर निचा था
और एक छोटी पद्य भगवान् राम की गीता
में लिखे थे । मुझे तो इस का जेबल
एक ही चरण याद है जो इस प्रकार है:

‘श्रीरामचन्द्रमहामात्राधये

मन्त्रि धाराधराननुजम्’